जैन-कला की भारतीय-संस्कृति को अद्‌भुत देन

(डॉ. सुरेन्द्रकुमार आर्य)

भारतीय - संस्कृति में समन्वय का तत्त्व प्रमुख रहा है । इसमें वैदिक, बौद्ध, जैन, शाक्त, और गाणपत्य व शाक्त-मत का अभूतपूर्व समन्वय रहा है । इन विभिन्न धर्मों में सैद्धान्तिक भेद होते हुए भी सभी का लक्ष्य समान था । यह लक्ष्य भारतीय संस्कृति का मूलमंत्र था कि धर्म और नीति समानरूप से एक दूसरे से जीवन्तता प्राप्त करें । नैतिक आदर्शों की स्थापना में मैत्री, बंधुत्व, अहिंसा, सत्याचरण सभी धर्मों ने स्वीकार किये । जैनकला में भी जीवन की तालबद्ध जीवंतता के दर्शन होते हैं । स्थापत्य मूर्ति और चित्रकला के क्षेत्र में जैनधर्म ने भी सौंदर्यप्रधान दृष्टि को स्थापित किया । तीर्थंकर मंदिरों के निर्माण में जहाँ एक ओर जैनदर्शन का गूढ़अर्थ सामान्य-जन को स्पष्ट हुआ कि सामाजिक कल्मष से ऊंचे उठकर दिव्य भाव से अनुप्राणित होकर मन-वचन और कर्म की शुद्धता को अहिंसा भाव से मंडितकर क्रमशः ऊपर उठकर प्रवेश द्वार, मंडप, गर्भगृह और शिखर तक पहुंचना है तो मूर्तिशिल्प में अपने आराध्य का अलौकिक स्वरूप जानकर उसमें अपने को समाहित कर मोक्ष की प्राप्तिकर, चिर-सौन्दर्य का प्रत्यक्षीकरण करना है । भगवान् महावीर ने एक ऐसे व्यापक दर्शन का निर्माण किया जो समस्त जीवों के लिये मंगलप्रद था । आनंद कुमारस्वामी के लेखों व मथुरा के कंकाली टीले की खुदाई से भारतीय कलाविदों का ध्यान जैनकला की ओर १७८४ ई. से गया और आज तक संपूर्ण भारत में ६४० से अधिक स्थानों पर जैन स्थापत्य, मूर्ति एवं चित्र की प्राप्ति होकर ऊपर बीसों पुस्तकें हिन्दी व अंग्रेजी में लिखी गई हैं । प्रस्तुत लेख में मध्यप्रदेश में जैन कला के खोजे गये नये स्थान व अवशेषों का दिग्दर्शन कराया गया है साथ ही साथ जो पूर्व में शोधकार्य हुए हैं उनका भी आकलन कर यह स्वरूप देने का प्रयास किया गया है कि समग्र प्राचीन भारतीय कला में जैन-कला व उसमें भी मध्यप्रदेश का शैलीगत क्या योगदान है ? मध्यप्रदेश में जैनकला का जन्म व विकास का सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है । मध्यप्रदेश में जैनकला का इतिहास गौरवमय रहा है । इस क्षेत्र में चौथी से लेकर पंद्रहवीं शताब्दी तक जैन संस्कृति अनेक रूपों में पल्लवित-पुष्पित हुई । भारत के अन्य धर्मों की अपेक्षा जैन धर्म में समता, अहिंसा एवं सम्यग् संकल्प को विशेष बल दिया गया । इस धर्म में नैतिकता, वैचारिकता का उन्नयन तथा आत्म-संयम का अनोखा संगम है । जैनधर्म में महावीर के एवं अन्य तीर्थंकरों के तपो-निष्ठ व्यक्तित्व को आदर्श माना गया है । यही कारण है कि जैनधर्म के शाश्वत सिद्धान्त में आजतक कोई अंतर नहीं आया है।

मध्यप्रदेश में जैनकला के प्रमुख केन्द्र :- दशपुर के लिए जैन ग्रन्थों मे वर्णन मिलता है कि यहां प्रद्योत के समय काष्ठ निर्मित महावीर प्रतिमा की स्थापना व उस पर उत्सव मनाया गया था । इस प्रतिमा को ''जीवन्त स्वामी'' की प्रतिमा कहा गया है अर्थात् महावीर के जीवन काल में ही इस प्रतिमा के प्रति जनता में पर्याप्त आदर भाव था । परन्तु विद्वान् इस कथन से सहमत नहीं है क्योंकि जैन संदर्भ बहुत बाद के हैं । इस आधार पर मध्यप्रदेश में कोई भी जैन- प्रतिमा गुप्तकाल से प्राचीन नहीं मिलती है । गुप्तों के बाद मध्यप्रदेश में प्रतिहार, कलचुरि, चंदेल, परमार नरेशों ने राज्य किया और इन राजाओं के संरक्षण में जैनकला का विकास तीव्रता से हुआ । मध्यप्रदेश में जैन धर्म के केंद्रों के रूप में सिद्धक्षेत्र, अतिशय क्षेत्र तथा कलाक्षेत्र हैं । जो अपनी जैन मूर्ति एवं स्थापत्यकला की दृष्टि से प्रसिद्ध हैं । जैन परंपरा में सिद्धक्षेत्र उन स्थानों को कहते हैं, जहां पर निर्ग्रन्थ मुनियों नें आत्म साधना द्वारा तप करके केवल-ज्ञान प्राप्त किया । ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् उन्होंने जीवों को कल्याण के उपदेश दिये फिर वहां से मुक्त हो गये - ये स्थान हैं - पावागिरि, चूलगिरि, द्रोणगिरि, सोनागिरि, देशान्दिगिरि व सिद्धवरकूट ।

अतिशय क्षेत्र - अतिशय क्षेत्र उन क्षेत्रों को कहा गया है जहां जैन मुनियों के साथ कुछ अतिशय (चमत्कारिक घटना) हुआ । मध्यप्रदेश में अतिशय क्षेत्रों की संख्या इस प्रकार परिगणित की जा सकती है - चंदेरी, थूबोन, बाहुरिबंद, सिंहोनिया, पनागर, पटनागंज, बंधा, आहार, गोलाकोट, पचराई, पपौरा, कुण्डलपुर कोनी, तालनपुर, मक्सी पार्श्वनाथ बनैड़िया, बीना-बारहा, बूढ़ी चंदेरी, खन्दार, हस्तादौन इनमें से अनेक स्थानों पर जैन पुरातन संपदा बिखरी पड़ी है । प्रस्तुत पंक्तियों के लेखक ने जैनतीर्थ मगसी पार्श्वनाथ के अवशेषों का विस्तृत अभ्यास कर मक्सीतीर्थ की पुरातात्विक मूर्तियों एवं उनका 'कलागत पक्ष' विषय पर पुस्तिका प्रकाशित की है जो प्रत्येक दर्शनार्थी को मक्सीतीर्थ पर निःशुल्क वितरित की जाती है । बनेडिया जी में जैन तीर्थंकर प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं जो ९ वीं से १३ वीं शताब्दी के काल में निर्मित हुई थीं । सभी प्रतिमाएँ कला के उन्नत स्वरूप को व्यक्त करती हैं ।

कलाक्षेत्र - मध्यप्रदेश में अनेक ऐसे स्थान भी हैं जहां ब्राह्मण शिल्प के साथ जैन शिल्प भी निर्मित हुआ - ऐसे स्थानों पर जैन मूर्ति- कला का विकास एवं उनका चरमोत्कर्ष भी देखा जा सकता है । ग्वालियर, अजयगढ़, त्रिपुरी, उदयपुर, बड़ोद, पठारी, विदिशा, मंदसौर, उज्जैन, खजुराहो, गुना, ईसागढ़, अंदार, गंधावल, बड़वानी, पचोर, सुंदरली, आष्टा, शाजापुर, शुजालपुर, वाण्याखेड़ी व सांवेर जिसे क्षमणेर नगरे कहा गया है आदि स्थानों पर जैन मूर्तियाँ, मंदिर व चित्र मिलते हैं ।

इन स्थानों पर प्राप्त जैन मूर्तिशिल्प के आधार पर एक विभाजन कालक्रमानुसार भी किया जा सकता है जो इस प्रकार होगा - (१) गुप्तकालीन शिल्प (२) मध्यकालीन (६००-९०० ई.) एवं (३) उत्तरकालीन (९०० ते १५०० ई.) शिल्प । मध्यप्रदेश के प्रमुख कलाकेंद्रों को भी क्षेत्र के आधार पर विभाजित किया जा सकता है - (१) गोपाद्रि-विध्यक्षेत्र के जैन

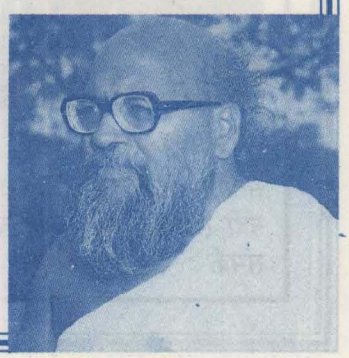

विद्यार्थी को चाहिए, कम निद्रा आहार ।
जयन्तसेन मानस शुचि, रक्खो विनय विचार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलाकेंद्र (२) मालवा क्षेत्र के जैन कला केंद्र (३) मध्यक्षेत्र के जैनकला केंद्र व (४) छत्तीसगढ़ क्षेत्र के जैन कला केंद्र ।

प्रथम क्षेत्र के अंतरगत ग्वालियर प्रमुख है । प्राचीनकाल में यह नगर गोपाद्रिपुर के नाम से जाना जाता था । ग्वाल्हेर, ग्वालियर के रूप में धीरे धीरे जाना जाता रहा है । जैन-ग्रन्थों में इसे गोपगिरि, गोपाचलगढ़ और गोवागिरि कहा गया है । यहां पर जैन कला के अवशेष ९०० ई. के बाद के काल के मिलते हैं । प्रबंधकोष एवं प्रभावक चरित के अनुसार गोपाचलगढ़ पर जैन मूर्ति एवं स्थापत्य का निर्माण किया गया था । कनिंघम को १८४४ ई. में महत्त्वपूर्ण जैन मंदिर के ध्वंसावशेष मिले थे । इस मंदिर का निर्माण ११०८ ई. में हुआ था यहां से पद्मासन और खड्गासन मुद्रा में अनेक तीर्थंकर प्रतिमाएँ मिली हैं । ग्वालियर किले के संग्रहालय में यहां से प्राप्त अम्बिका यक्षी और गोमेद यक्ष प्रदर्शित हैं जिनका निर्माणकाल आठवीं शताब्दी निर्धारित किया गया है । इसी काल की तीन स्वतंत्र जैन प्रतिमाएँ क्रमशः आदिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर की मिली हैं । यहां एक चौवीस तीर्थंकर अंकित किये हुए पद भी अवस्थित हैं । नंदीश्वर द्वीप सहित आदिनाथ तीर्थंकर की एक महत्त्वपूर्ण कलात्मक प्रतिमा भी यहां प्रदर्शित है जो गोपाद्रिकर की जैनकला का वैभवकाल प्रदर्शित करती है ।

सिंहौनिया (मुरैना जिले में स्थित) भी जैन संस्कृति का एक प्रमुख केंद्र रहा है यहां भगवान् शांतिनाथ का जिनालय है इसमें शांतिनाथ की बलुए पत्थर से निर्मित १६ फिट ऊंची प्रतिमा है । टीकमगढ़ जिले में स्थित पपौरा में १२ वीं शताब्दी का मंदिर अवस्थित है । इस मंदिर में भगवान् शांतिनाथ की काले पत्थर की प्रतिमा है जिसके पादपीठ कर संवत् १२०२ अंकित है । आहार नामक स्थान पर शांतिनाथ का एक अन्य महत्त्वपूर्ण मंदिर है इसमें कन्थुनाथ की १० फुट ऊंची प्रतिमा अत्यन्त कलात्मक है जिसका उत्कीर्णन संवत् १२३७ में किया गया था ।

खजुराहो में चंदेल कला का उत्कृष्ट रूप कहरिया महादेव मंदिर में मिलता है, परन्तु यहां का जैनशिल्प भी कला के विकास-क्रम को सूचित करता है । यहां के तीन प्रसिद्ध जैनमंदिर हैं - (१) पार्श्वनाथ मंदिर (२) आदिनाथ मंदिर (३) घंटाई मंदिर । प्रथम मंदिर विशाल तथा मूर्तिशिल्प से समृद्ध है । ब्राह्मण मंदिरों की भांति इसमें भी गर्भगृह की बाह्य दीवारोंपर अग्नि, ईशान, नैऋत्य, बृहस्पति, यम, कुबेर, आदि देवता प्रदर्शित हैं । बीच-बीच में सुरसुन्दरिकाएँ, मृदंगवादक, वेणुवादक, अंकित हैं । मंदिर का निर्माण १० वीं शताब्दी का माना जाता है ।

मंदिर क्रमांक २ आदिनाथ का मंदिर है, इसका स्थापत्य एवं आयोजना वामन मंदिर के समान है । डॉ. कृष्णदेव ने अपने लेख "दि टेम्पल्स ऑफ खजुराहो इन सेन्ट्रल इंडिया" (एन्शन्ट इंडिया, अंक १५ पृ. ५५) में इसका निर्माण काल ग्यारहवीं शती का उत्तरार्द्ध माना है । घंटाई मंदिर में भी जैनमूर्ति अवशेष सुरक्षित हैं । एक पार्श्वनाथ की भव्य पद्मासना प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय में सुरक्षित कर प्रदर्शन हेतु रखी गई है । यहां पर दसवीं से १२ वीं शती के मध्य निर्मित लगभग २५० प्रतिमाएँ कलादीर्घा में प्रदर्शित हैं ।

उज्जैन की प्रतिष्ठा प्राचीन सप्तपुरियों में की गई है । यह एक प्रसिद्ध सांस्कृतिक केंद्र था और जैन धर्म की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण तीर्थ के रूप में स्थापित था । यहां के जैन शिल्प की पर्याप्त चर्चा पुस्तकों में प्रकाशित है । यह स्थान जैनतीर्थ के रूप में प्रसिद्ध था । उज्जयिनी की चर्चा जैनग्रन्थों में भगवान् महावीर की उपसर्ग भूमि के रूप में की गई है । हेमचंद्राचार्य, प्रभावकचरित, कालकाचार्य कथानक आदि ग्रंथों व अनुश्रुतियों में जैन तीर्थ के रूप में इस नगरी को अधिष्ठित किया गया है ।

श्वेताम्बर परंपरा के अनुसार यहां एक जैन मंदिर था, जिसमें जीवन्त स्वामी की प्रतिमा थी । यहां पर उज्जैन परिसर से एकत्र जैन तीर्थंकर प्रतिमाएँ एकत्रित कर जयसिंहपुरा जैन पुरातत्व संग्रहालय में संग्रहित हैं इनमें आदिनाथ, श्रेयांसनाथ, पार्श्वनाथ, कुंथुस्वामी एवं महावीर की पादपीठ लेखयुक्त प्रतिमाएँ संग्रहित हैं । कला की दृष्टि से ये प्रतिमाएँ महत्त्वपूर्ण हैं इनमें परमारकालीन कला सौष्ठव दृष्टव्य है । मांसल शरीर यदि पद्मासना या खड्गासना है परन्तु यक्ष यक्षिणी व अष्ट प्रतिहार्यों में अंकित चंवरधारिणी, देव-मंडली, नृत्यांगना, अप्सराएँ जीवन के भौतिक रूप को अधिक मांसल स्वरूप में व्यक्त करती हैं । इसीप्रकार विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन के पुरातत्त्व संग्रहालय में झर, हासामपुरा (जैनतीर्थ) एवं आष्टा व मक्सी से एकत्रित तीर्थंकर प्रतिमाएँ प्रदर्शित हैं जिनका कलात्मक पक्ष अत्यन्त प्रखर है । ये प्रायः पादपीठ लेखयुक्त हैं व इन्हें परमार नरेश भोज, उदयादित्य, नरवर्मन के काल में निर्मित माना जाता है । "समरांगण सूत्रधार" एवं 'युक्तिकल्पतरु' नामक प्रतिमा विज्ञान एवं स्थापत्य विषयक लिखे ग्रन्थों में बताये लक्षण, आकार, प्रमाण, वाहन आदि इन मूर्तियों में दृष्टि गोचर होते हैं । उज्जयिनी के जैनशिल्प में स्पष्टतः राष्ट्रकूट मूर्तिशिल्प पद्धति एवं - परमार कला का शैलीगत एवं शिल्पगत सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है ।

प्राचीन काल में वर्द्धमानपुर के रूप में जिस स्थान की चर्चा हुई है

---

१ जैन कला तथा स्थापत्य (तीनखण्डों में) नई दिल्ली, संपा. अमलानंद घोष, १९७५, पृ. ३७

डॉ. सुरेन्द्रकुमार आर्य

जैन मूर्तिकला तथा जैन पुरावशेषों पर विशेष कार्य । जैन पत्रिकाओंमें शताधिक लेखों का प्रकाशन । तीर्थंकर महावीर २५०० वें निर्वाण वर्ष के उपलक्ष में शाजापुर जिले (म. प्र.) के जैन अवशेषों का सर्वेक्षण पूर्ण किया । विश्वविद्यालयीन संगोष्ठियों में शोध-लेखों का वाचन। कई स्थानों पर नए जैन शिल्पों की खोज । जैन मूर्तियों का पादपीठ वाचन एवं प्रकाशन ।

सम्प्रति - सचिव, विशाला शोध परिषद उज्जैन, प्रमुख वैदिक नंदी सरस्वती शोध अभियान.

संमर्क : २२, भक्तनगर, दशहरा मैदान, उज्जैन.

जहाँ समर्पण भाव हैं, वहाँ न संशय लेश ।
जयन्तसेन स्वयं सफल, कार्य करत तज द्वेष ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उसे डॉ. हीरालाल जैन एंव डॉ. ए. एन. उपाध्ये ने वर्त्तमान बदनावर से पहचान की है । यहां पर कई जैन मंदिर थे जिनके ध्वंसावशेष सिरनी के बाड़े में पड़े हैं । यहां की एक अच्छुम्मादेवी (घोडे पर सवार) की अभिलेखयुक्त प्रतिमा जयसिंहपुरा-जैन-मूर्ति संग्रहालय में प्रदर्शित है ।

गंधावल जिसकी पहचान गंधर्वपुरी से की गई है, वह भी एक महत्त्वपूर्ण जैन मूर्तियों का स्थान है । प्राचीन काल में यह जैनों का प्रसिद्ध तीर्थ रहा होगा । यहां का जैन शिल्प परमारकालीन है । यहां पर महत्त्वपूर्ण प्रतिमा ऋषभदेव की है जो पद्मासना है, सौम्य चेहरे पर दिव्य अलौकिक भाव है । स्कंध स्पर्श करती तीन अलकावली सुशोभित है । यहां की चक्रेश्वरी यक्षिणी के कलात्मक पक्ष की ओर पंक्तियों के लेखक ने भारतीय कला समीक्षकों का ध्यान केंद्रीय संग्रहालय इंदौर के रजत जयंति उत्सव पर आयोजित संगोष्ठी में आकर्षित किया था । मूलतः प्रतिमा २० भुजाधारी थी जिसके अधिकांश हाथ खंडित हो चुके हैं । शेष हाथों में फल, वज्र, पाश व चक्र आयुध बचे हैं । देवी के शीर्ष भाग में पांच कोष्ठकों मे पांच तीर्थंकर मूर्तियाँ स्थापित हैं । देवी के एक ओर वाहन गरुड़ प्रदर्शित है । देवी की शरीर यष्टि समभंग में प्रदर्शित है । यहां एक महावीर भगवान् की प्रतिमा अपने अष्ट प्रतिहार्यों से युक्त निर्मित की गई मिलती है । एक महत्त्वपूर्ण चतुर्विंशति पट्ट भी स्थित है ।

बड़वानी की "बावनगजा" प्रतिमा अपने विशाल परन्तु संतुलित शरीर निर्मिति के कारण विश्वभर में विख्यात है । यह एक सिद्ध क्षेत्र है जिसका उल्लेख जैन ग्रन्थों में चूलगिरि के नाम से हुआ है । भगवान् आदिनाथ की प्रतिमा भव्य एवं दृष्टव्य है । निर्माणकाल १२ वीं शताब्दी का है । यह मूर्ति शिल्प विधान की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वकी है । मूर्ति देखकर ही धर्म श्रद्धालु उसके भव्य रूप को हृदयंगम एवं आत्मसात करते हैं । पहाड़ की तलहटी में १९ मंदिर हैं जिनमें मुनि सुव्रत नाथ की विक्रमसंवत् ११३१ की प्रतिमा अत्यन्त कलात्मक है ।

ऊन एक अन्य महत्त्वपूर्ण जैनतीर्थ है जो मध्यप्रदेश के पश्चिमी निमाड़ जिले में स्थित है । राजा बल्लालदेव ने इन मंदिरों को बनाया उनका अभिप्रेत शतक मंदिर का था परन्तु वे ९९ मंदिर ही बना पाये और एक मंदिर की कमी के कारण ही वह 'ऊन' नाम से विख्यात हुआ ।

पुरातत्ववेत्ता राखालदास बेनर्जी के अनुसार मध्यभारत में खजुराहो के पश्चात् ऊन ही एकमात्र ऐसा स्थान है जहां इतने प्राचीन देवालय विद्यमान हैं । चौबाराडेरा, एवं ग्वालेविर मंदिर जैन स्थापत्य शिल्प की उत्कृष्टता का प्रकाशन करते हैं । विदिशा नगर की परिगणना प्राचीन नगरों में की जाती है । जैनधर्म की महत्त्वपूर्ण प्रतिमाएँ यहां बेसनगर से मिली हैं । प्राचीन विदिशा नगर की सीमा में स्थित दुर्जनपुर नामक स्थान से तीन तीर्थंकर प्रतिमाएँ प्राप्त हुई है जिनपर महाराजाधिराज रामगुप्त के समय का अभिलेख है । ये मध्यप्रदेश में अबतक प्राप्त तीर्थंकर प्रतिमाओं में सबसे प्राचीन एवं अत्यन्त कलात्मक हैं । ये प्रतिमाएँ तीर्थंकर चंद्रप्रभ, पुष्पदंत की हैं । अन्य महत्त्वपूर्ण प्रतिमाएँ पार्श्वनाथ, शांतिनाथ, नेमिनाथ, ऋषभदेव की हैं तथा पद्मावती यक्षी तथा धरणेन्द्र यक्ष की प्रतिमाएँ श्रेष्ठ जैनकला का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं ।

बडोह पठारी में गडरमल का मंदिर भव्य है । मंदिर के सिरदल (ललाटबिम्ब) में चतुर्भुजी जैन यक्षिणी की भव्य कलात्मक प्रतिमा अंकित है जिसे पाश्चात्य कलाविदों ने खूब सराहा है ।

ग्यारसपुर के मालादेवी मंदिर में भगवान् शांतिनाथ की खड्गासना प्रतिमा बड़े मनोहारी रूप में अंकित है । यह प्रतिहार-कालीन मूर्तिकला का श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत करती है । इसी प्रकार कलचुरि काल की प्रतिमाएँ त्रिपुरी में स्थित है । यहां अम्बिका यक्षी व पद्मावती की महत्त्वपूर्ण कलाकृतियाँ हैं जिनके अभ्यास से भारतीय जैनमूर्ति शिल्प का उदात्त स्वरूप ज्ञात हो सकता है । बाहुरीबंध से शांतिनाथ भगवान् की दिव्य प्रतिमा मिली है । यहां अम्बिका व पद्मावती यक्षिणी की प्रतिमा भी कलात्मक पक्ष को उजागर करती है ।

लखनादीप, बारहा, बीना, कुण्डलपुर, कारीतलाई कोनोजी, ऐसे स्थान हैं जहां से १० वीं ११ वीं शताब्दी का कलचुरिकालीन स्थापत्य एवं मूर्तिशिल्प प्राप्त होता है । यहां के नंदीश्वर द्वीप व सहस्त्रकूट जिनालय अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कलात्मक अंकन हैं ।

छत्तीसगढ़ क्षेत्र में आरग, राजिम, सिरपुर, ऐसे स्थान हैं जहां पर जैनशिल्प अपनी चरम पराकाष्ठा पर पहुंचा विदित होता है ।

अंत में यक्ष मूर्तियों की चर्चा करना आवश्यक है । ये महत्त्वपूर्ण यक्ष हैं - गोमुख, गोमेध, पार्श्व एवं मातंग । खजुराहो से १०-११वीं शती की गोमुख की द्विभुजी और चतुर्भुजी मूर्तियाँ मिलती हैं । इनका वाहन वृषभ स्पष्ट है । हाथों में पद्म, गदा व मुद्रा या सिक्कों का थैला रहता है । गोमेध यक्ष की प्रतिमा भावपुरा, केथुली व मालादेवी मंदिर में प्राप्त हुई हैं । यह तीर्थंकर नेमिनाथ का यक्ष है । और नेमिनाथ का वाहन गज रहता है । ललित मुद्रा में मालादेवी मंदिर में अंकित गोमेधयक्ष भव्य है ।

खजुराहो में भी ऐसे रूप की श्रेष्ठ कलात्मक प्रतिमाएँ अवस्थित हैं ।

पार्श्वयक्ष २३ वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का है । इसे सर्पफण के छत्र से चतुर्भुजी बताया गया है इसका वाहन कूर्म है । स्वतंत्र यक्ष की प्रतिमा भी मालादेवी मंदिर में मिलती हैं । मातंग यक्ष २४ वें तीर्थंकर महावीर का है । खजुराहों में इसकी भव्यप्रतिमा विद्यमान हैं ।

प्रसिद्ध विद्वान् प्रोफेसर के. डी. वाजपेयी के शब्दों में "मध्यप्रदेश के अधिकांश जैन मंदिरों का निर्माण नागर शैली पर हुआ । मूर्तियों में प्रतिमा लक्षणों की ओर विशेष ध्यान दिया गया है और इनके अभ्यास से संपूर्ण जैनकला के स्वरूप का आकलन हो सकता है ।"[1]

मेरे विदेशी मित्र न्यूमायर इरविन (आस्ट्रिया-युरोप) ने जैनमूर्तियों को देखकर कहा था कि मध्यप्रदेश के जैनशिल्प में जहां जैनधर्म व दर्शन जीवंत हुआ है वहीं श्रेष्ठ कला का उदात्त स्वरूप भी प्रकट हुआ है । ऐसे जैनशिल्प से मंडित मध्यप्रदेश में जैनधर्म एक समय प्रमुख धर्म था ।

---

१ 'अनेकांत' 'मध्यप्रदेशकी प्राचीन जैन कला' लेख पृ. ११९
प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी

मित्रता यहाँ कर सको, करो नीर सह दूध ।
जयन्तसेन यथा समय, ले वह अपनी सुध ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org